ISSN No. : 2394-0344 **REMARKING :** VOL-1 * ISSUE-5*October-2014

# 'प्रेम' विषयक भवभूति की अवधरणा

**जयप्रकाश नारायण**
**Desig.**
संस्कृत विभाग
**College,**
**City.**

**Please fill above Detail**

**सारांश**

काव्यनिर्माण का मुख्यप्रयोजन आनन्द की प्राप्ति होता है और आनन्द की प्राप्ति 'प्रेम' से होती है। प्रेम शब्द बहुत ही व्यापक है जिसके बिना जीवन का समग्र व्यापार अधुरा रह जाता है। प्रेम ही मानव को एक दूसरे से जोड़ता है तथा ईश्वर से मिलाता है यह प्रेम अनुभवसि होता है। महान संत कबीर दास ने प्रेम की व्यापकता को दर्शाते हुए कहा है–

पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ पण्डित भया न कोय।
ढाई आखर 'प्रेम' का पढ़े सो पण्डित होय।।

प्रायः सभी सद्ग्रन्थों में प्रेम के स्वरफप पर विचार किया गया है। संस्कृत के महान नाटककार भवभूति ने अपने रूपकों में जिस सात्विक और आदर्श प्रेम का स्वरफप वर्णित किया है उसी का विवेचन प्रस्तुत शोधपत्रा में किया जायेगा जो हमारे लिए पाथेयसि हो सकता है।

**मुख्य शब्द : Please Add Some Keywords**

**प्रस्तावना**

पद–वाक्य–प्रमाणज्ञ से विभूषित महाकवि भवभूति संस्कृतसाहित्य के प्रसिद्ध नाटककार हैं। इन्होंने 'एको रसः करफण एव' कहकर करफणः रस को ही नाटक का अंगीरस माना है। इनके तीन रूपक हैं– मालती माध्व, महावीर चरितम् तथा उत्तररामचरित। उत्तररामचरित इनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। अतएव कहा गया है– 'उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते।' ये भाव पक्ष के कवि हैं। अतः इन्होंने अपने रूपकों में प्रेम–तत्त्व का गहनतम विवेचन किया है।

मानव जीवन में 'प्रेम' शब्द का बहुत अधिक महत्त्व है। प्रेम के बिना सब कुछ खाली सा हो जाता है। हर कोई प्रेम का भूखा होता है। अबोध बच्चों को भी जहाँ प्रेम मिलता है वहीं चला जाता है। मानव के अलावा पशु–पक्षी आदि भी प्रेम पाने को आतुर रहते हैं। भगवद्भक्ति हो, चाहे मानव का सामान्य व्यवहारय हर जगह प्रेम का ही संसार रहता है। प्रेम के अनेक पर्याय हो सकते हैं। जैसे– आराधना, श्रम, लगाव, अनुराग, आसक्ति, समर्पण, इश्क इत्यादि। परन्तु सच्चा प्रेम वही होता है जो निःस्वार्थ हो, सकारात्मक हो, भेद–भाव से रहित हो। यथा महान् संत कबीर साहब ने भी कहा है–

पोथी पढ़ी पढ़ी जग मुआ, पण्डित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े जो पण्डित होय।।

तथा

प्रेम न बाड़ी उपजे प्रेम न हाट बिकाय।
राजा प्रजा जेहि रफचे शीश देई ले जाय।।

रहीम कवि भी कहते हैं–

रहिमन धगा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाय
टूटे पे पिफर ना जुड़े, जुड़े गाँठ पड़ि जाय।।

संस्कृत साहित्य में तो प्रेम तत्त्व का विस्तृत विवेचन किया गया है। संस्कृत के महान् नाटककार तथा भावपक्ष के महाकवि भवभूति ने अपने रूपकों में बहुत ही विस्तार से प्रेम के स्वरूप का विवेचन किया है जो मानवीय संवेदनाओं का मूलाधर होता है।

**सन्तति प्रेम**

भवभूति ने अपने तीनों रूपकों में प्रेम तत्त्व का विस्तृत विवेचन किया है, किन्तु उत्तररामचरित में प्रेम के विराट् स्वरूप और असीम ;सीमातिगद्ध क्षेत्रा का परिचय दिया है। इसका मूल मंत्रा राम के शब्दों में देखा जा सकता है–

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः को{पि हेतु–र्न खलु बहिरफपाधीन्प्रीतयः संश्रयन्ते।
विकसति हि पतर्धैस्योदये पुण्डरीकं द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः।।[1]

यहाँ राम का लव के प्रति अचानक उमड़ते स्नेह का अनुभव करते हुए राम कहते हैं–कोई आन्तरिक हेतु ही पदार्थों को परस्पर संसक्त करता है। प्रीतियाँ निश्चय ही बाहरी उपाधियों ;हेतुओंद्ध का आश्रयण ;अपेक्षाद्ध नहीं रखती है। कमल सूर्य के ही उदित होने पर खिलता है, और चन्द्रकान्त मणि चन्द्रमा के ही उदित होने पर द्रवित होता है। इस श्लोक से भवभूति के प्रेमविषयक

सिसानत पर प्रकाश पड़ता है। भवभूति प्रेम को बाह्य कारणों पर आश्रित नहीं मानते। प्रेम, और वह किसी बाह्य कारण पर आश्रित हो, यह दोनों बातें परस्पर विरफोटक हैं। स्नेहश्च निमित्तसव्यपेक्षश्च इति विप्रतिसिमेतत्। प्रेम तो अकारण स्वप्रेरित और अनिर्वाच्य होता है। प्रेम का रहस्य तो केवल हृदय ही जानता है–

''हृदयं त्वेव जानाति प्रीतियोगं परस्परम्'' बाह्य कारणों पर आश्रित प्रेम कभी स्थायी नहीं होता है, जैसा कि इस युग में प्रत्यक्ष देखा जा रहा है। दो हृदयों के परस्पर मेल के मूल में कोई आन्तरिक हेतु होता है। लव को देखते ही राम के हृदय में सहसा जो प्रेम अंकुरित हुआ, उसके मूल में भी पिता–पुत्रा सम्बन्ध रूप अज्ञात आन्तरिक कारण ही निश्चित था।

शिशुओं के साथ प्रेम का वास्तविक रूप भवभूति की दृष्टि में अत्युच्च है। जैसे ठूँठ में भी बसन्त सरलता ला देता है, वैसे ही यह शिशु–प्रेम )षियों और चराचरों को सप्रेम बना देता है। आत्रोयी के शब्दों में–

द्वारकद्वयमुपनीतम्। तत्खलु न केवलमुषीणामपि तु चराचराणां भूतनामान्तराणि तत्त्वान्युपस्नेहयति।;उ.रा.च. द्वितीय अंक पृ.150)

शिशुयुगल लाकर दिया, वह ;शिशुयुगल द्ध न केवल शिषयों के, अपितु जंगम और स्थावर सभी प्राणियों के भी अन्तःकरणों को स्नेहयुक्त करता है।

माता–पिता के लिए शिशु क्या है? अर्थात् कितना महत्त्वपूर्ण है इसका वर्णन करते हुए भवभूति कहते हैं–

अन्तः करणतत्त्वस्य दम्पत्योः स्नेहसंश्रयात्।
आनन्दग्रन्थिरेको{यमपत्यमिति बध्यते।[2]

दम्पत्ति के स्नेह का आश्रय होने के कारण उनके अन्तःकरणरूप तत्त्व की 'अपत्य' इस प्रकार की अनुपम गाँठ ;विधता के द्वाराद्ध बाँधी जाती है। संतान ही पति और पत्नी के स्नेहासिक्त हृदयों को एक सूत्रा में बाँधनेवाली आनन्दमयी ग्रन्थि है।

पति और पत्नी का वात्सल्य अपत्य में केन्द्रित रहता है। अतः अपत्य ;संतानद्ध उनके स्नेह का आश्रय अर्थात् आस्पद होता है। उनका वह स्नेह सर्वथा वासना से अकलुषित रहता है। इसप्रकार पति–पत्नी का हृदय अपत्य से बँधा हुआ नित्य अलौकिक आनन्द का अनुभव करता है। अतः अपत्य को आनन्दमयी गाँठ कहा गया है। अपत्य पति–पत्नी के हृदय को बाँध रखने वाली वह अनुपम गाँठ ;बन्धनद्ध है जिससे अन्य बन्धनों की तरह दुःख का अनुभव नहीं होता है, बल्कि नित्य नूतन आनन्द मिलता है।

भवभूति ने अपत्य की भारतीय संस्कृति के अनुरूप वह परिभाषा प्रस्तुत की है जिससे कवि की अपत्य विषयक उच्च एवं पवित्रा भावना अभिव्यक्त हो रही है। न पतति वंशो येनेत्यपत्यम् इस व्युत्पत्ति के अनुसार अपत्य वैसी उच्च एवं पवित्रा भावना का विषय होने का अधिकार भी रखता है।

अपनी सन्तति का शोक कितना गहरा हो सकता है– इसकी कल्पना महाराज जनक के उदाहरण से देखा जा सकता है। सीता के निर्वासन का वृत्तान्त सुनकर वे वैखानस बन कर तप करने लगे, पर तब भी सीता के वियोग–जनित व्यथा से उनकी मुक्ति नहीं है–

हृदि नित्यानुषक्तेन सीताशोकेन तप्यते।
अन्तः प्रसृप्तदहनो जरन्निव वनस्पतिः।।[3]

वे सीता के विषय में 'वदनकमलकं शिशोः स्मरामि' के अनुसार सदैव चिन्तित रहे।

**दाम्पत्य प्रेम**

पति और पत्नी का प्रेम इस प्रसंग में सर्वोपरि है। पत्नी का एक वाक्य स्नेह निर्भर होने पर क्या प्रभाव डाल सकता है इसका निम्न उदाहरण द्वारा अनुभव किया जा सकता है–

म्लानस्य जीवकुसुमस्य विकासनानि,
सन्तर्पणानि सकलेन्द्रियमोहनानि।
एतानि ते सुवचनानि सरोरफहाक्षि,
कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि।।[4]

सीता द्वारा राम को यह कहने पर कि 'मुझ पर आपका अचल अनुग्रह है, अब इसके अतिरिक्त क्या चाहिए? इस पर राम कहते हैं– हे कमललोचने ! यह तुम्हारे मृदुवचन मुरझाये हुए जीवन पुष्प को विकसित करने वाले हैं। संतप्त करने वाले समस्त इन्द्रियों को विह्वल करने वाले कानों के लिए अमृतोपम तथा मन के लिए रसायन है।

पति–पत्नी के आदर्श सम्बन्ध का सुन्दर वर्णन मालतीमाधव में द्रष्टव्य है–

प्रेयो मित्रां बन्धुता वा समग्रा सर्वे कामाः शेवधिर्जीवितं वा।
स्त्रीणां भर्ता धर्म दाराश्च पुंसामित्यन्योन्यंवत्सयोर्ज्ञातमस्तु।[5]

वत्स, तुम्हें यह अच्छी प्रकार जान लेना चाहिए कि स्त्राी के लिए उसका पति और पति के लिए उसकी विवाहिता पत्नी, दोनों एक दूसरे के लिए परम प्रिय मित्रा हैं। यही सबसे बड़ा सम्बन्ध है, सारी इच्छाओं की पूर्णता है, सबसे बड़ी निधि है, अधिक क्या कहें, स्वयं जीवन ही है। प्रेम का प्रभाव माधव के लिए वर्णनातीत है–

परिच्छेदातीतःसकलवचनानामविषयः,पुनर्जन्मन्यस्मिन्न
नुभवपथं यो न गतवान्।
विवेक प्रध्वंसादुपचित महामोहगहनो विकारः को{प्यन्तंजडयति
पश्चतापं च कुहते।।[6]

प्रेम एक ऐसा मनोविकार है जिसकी व्याख्या असंभव है, जिसके विषय में ;शब्दों मेंद्ध कुछ कहा नहीं जा सकता। जिसे मैंने इस जन्म में पहले कभी अनुभव नही किया, जिसने मेरे विवेक को हर लिया है तथा जिसने मुझे महामोहान्धकार से ढक लिया है, मेरे अन्तः करण को जड़ीभूत कर रहा है और संतप्त भी कर रहा है।

भवभूति के अनुसार प्रेम की ज्योति सुख के समीर तथा दुःख की आँधियों में समान रूप से जल रही है तथा पति–पत्नी का स्नेह अद्वैत रूप स्थापित कर देता है–

अद्वैतं सुखदुःखयोरनुगुणं सर्वास्वस्थासु यद्
विश्रामो हृदयस्य यत्रा जरसा यास्मिन्नहार्यो रसः।
कालेनावरणात्ययात् परिणते यत्स्नेहसारे स्थितं
भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत्प्राप्येते।[7]

जो दाम्पत्य सुख और दुख में एक रूप है, सभी अवस्थाओं में अनुसरण करने वाला है, जिसमें हृदय का विश्राम है, जिसमें वृद्धवयवस्था ( से अनुराग छीना नहीं जा सकता है, जो समय पाकर आवरण के नष्ट हो जाने के कारण ;संकोचों के समाप्त हो जाने के कारणद्ध अथवा विवाह से मरण पर्यन्त परिपक्व उत्कृष्ट प्रेम में अवस्थित है, उस दाम्पत्य का वह विलक्षण प्रेम किसी प्रकार ;बड़े पुण्य सेद्ध प्राप्त किया जाता है। पवित्रा प्रेम के उपासक भवभूति का प्रेम वासना के स्तर से बहुत ही उफँचा है। इस श्लोक के सम्बन्ध में प्रो. काले का मत है–

What a grand ideal of conjugal love, the poet gives as hearer! Ram's words are not an effusion of youthful passion untried or experienced, but passion tempered downy by experience and long association get is impossible to describe a husbands love and regard for his wife more effectively or naturally then the poet has done here.

राम पत्नी को गृहशोभा के रूप में दखते हैं। कल्याणकारी पवित्रा दाम्पत्य प्रेम की प्राप्ति बड़े भाग्य से ही किसी को होती है। अपने इसी उदात्त एवं निःस्वार्थ प्रेम भाव की व्याख्या करते हुए भवभूति कहते हैं कि प्रिय चाहे प्रेमी के लिए कुछ भी न करें, केवल उसकी उपस्थिति ही प्रेमी के लिए अमूल्य निधि है। प्रिय के सान्निध्य मात्रा से प्रेमी का सारा दुःख दूर हो जाता है, अर्थात् जो जिससे स्नेह करता है वह उसके लिए सबकुछ है। इस प्रसर्घे में पत्नी का स्नेह अनिर्वचनीय है। राम ने सीता के प्रेम के विषय में कहा है–

न किचिदपि कुर्वाणः सौख्यैर्दुःखान्यपोहति।
तत्तस्य किमपि द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः।।[8]

इसलिए कहा गया है– जो जिसका प्रियजन होता है वह उसका अनिर्वचनीय द्रव्य होता है। (वहद्ध कुछ न करता हुआ (अपने सान्निधय मात्रा से जनितद्ध सुखों से दुःखों को दूर करता है। निश्चय ही प्रियजनों का सान्निधय सुखकर तथा सभी दुखों का निवारक होता है।

जिस प्रकार पतिव्रता–सीता के लिए पति ही सबकुछ है, उसके अलावा परपुरफष का चिन्तन सपने में भी नहीं कर सकती है उसी प्रकार राम का भी एक पत्नीव्रत था–

देव्या शून्यस्य जगतो द्वादशः परिवत्सरः।
प्रनष्टमिव नामापि न च रामो न जीवति।।[9]

पति–पत्नी के परस्पर प्रेम में भवभूति का अटूट विश्वास था–

प्रकृत्यैव प्रिया सीता रामस्यासीन्महात्मनः।
प्रियभावः स तु तथा स्वगुणैरेव वर्धितः।।
तथैव रामः सीतायाः प्राणेभ्यो{पि प्रियो{भवत्।
हृदयं त्वेव जानाति प्रीतियोगं परस्परम्।।[10]

राम कहते हैं– देवी ;सीताद्ध से शून्य संसार का बारहवाँ वर्ष है, (उसकाद्ध नाम भी जैसे लुप्त हो गया, राम नहीं जीवित है ऐसी बात नहीं। स्नेह का रूप सज्जनों की संगति में कम महत्वपूर्ण नहीं है। इसके लिए तो पुण्यों का न्योछावर किया जा सकता है।

वन देवता के शब्दों में–

सतां सद्भिः सर्धैः कथमपि हि पुण्येन भवति।।[11]

राम को सीता का परित्याग करने के पश्चात् नींद नहीं आयी थी। उन्होने स्वयं कहा है– कुतो रामस्य निद्रा।

राम के दाम्पत्य जीवन की मधुरिमा की एक झाँकी उ.रा.च. के तीसरे अंक में देखी जा सकती है–

आश्च्योतनं नु हरिचन्दनपल्लवानां निष्पीडितेन्दुकरकन्दलजो नु सेकः।
आतप्तजीवितपुनः परितर्पणो{यं संजीवनौषधि रसः नु हृदि प्रसिक्तः।।[12]

सीता के कर–स्पर्श से रामचन्द्र जी को अनिर्वचनीय आनन्द हुआ जिसके कारण वे अनेक प्रकार से अनुमान करते हैं। सचमुच अपने प्रिय का स्पर्श मात्रा ही अलौकिक आनन्द देता है तो दाम्पत्यके रूप में रहने पर आजीवन कितना आनन्द देगा।

राम और सीता का दाम्पत्य–भाव आदर्श था। वासन्ती के शब्दों में राम ने सीता के लिए ठीक ही कहा था–

त्वं जीवितं त्वमसि मे हृदयं द्वितीयं
त्वं कौमुदी नयनोरमृतं त्वमर्धैं।।[13]

सीता के वियोग में राम पूर्णतः विपन्न हैं। वे सीता की स्मृति करके रो उठते है। राम के शब्दों में उनकी दशा निम्न श्लोकों से व्यक्त हो रहा है–

दलति हृदयं गाढोद्वेगं द्विध तु न भिद्यते
वहति विकलः कायां मोहं न मुचति चेतनाम्।
ज्वलयति तनुमन्तर्दाहः करोति न भस्मसात्
प्रहरति विधि मर्मच्छेदी न कृन्तति जीवितम्।।[14]

गाढ़ोद्वेगपूर्वक ;अत्यन्त व्यथासम्पन्नद्ध हृदय पफट रहा है, पर दो टुकडे नहीं हो पाता। विकल शरीर मोहाच्छन्न है पर चेतना रहित नहीं हो पाता। आन्तरिक ज्वाला जला तो रही है पर राख नहीं बना देती। मर्मच्छेदी विधि प्रहार तो करता है किन्तु जीवन तन्तु को काट नहीं देता। यह श्लोक मालतीमाध्व में भी इसी प्रकार आया है।[15]

**भ्रातृत्व प्रेम**

भवभूति ने प्रथम दृष्टि में उत्पन्न स्नेह का वर्णन भी किया है जो स्वाभविक होता है। सुमन्त्रा के शब्दों में ऐसे प्रेम की व्याख्या इस प्रकार है–

सुमन्त्राः– भूयसा जीविर्ध्म एष यद्रसमयी कस्यचित् क्वचित्प्रीतिः, यत्रा लौकिकानामुपचारस्तारमैत्राकं चक्षुराग इति। तमप्रतिसंख्येयमनिबन्धनं प्रेमाणमामनन्ति।

अहेतुः पक्षपातो यस्तस्य नास्ति प्रतिक्रिया।
स हि स्नेहात्मकस्तन्तुरन्तर्मर्माणि सीव्यति।।[16]

प्रायः प्राणियों का स्वभाव है कि किसी का किसी में आनन्दमय प्रेम हो जाता हैय जिसमें लोगों का तारामैत्राक अर्थात् जन्म समय के नक्षत्रों की मित्राता अपना चक्षुराग ;नेत्रों का अनुरागद्ध जैसा व्यवहार होता है। उस प्रकार के प्रेम को अनिर्वचनीय तथा अहेतु कहते हैं। जहाँ स्वार्थ का लेश भी नहीं होता, वह हेतुरहित अनुराग होता हैय उसका प्रतिकार ;दूर करने का उपायद्ध नहीं है। वह प्रेममय सूत्रा भीतर के मर्म स्थानों को सीं देता है अर्थात दृढ़ता से जोड़ देता है।

यह प्रथम दृष्टिगत स्नेह महानुभाव से प्रतिपफलित होता है। ऐसे महानुभाव के सम्पर्क में यदि शत्राुभाव से भी भलेमानुश आ जायँ तो भी प्रेम ही उमड़ पड़ता है न कि य( की भावना। यह भाव अधेलिखित उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है–

एतस्मिन्मसृणितराजपट्टकान्ते,मोक्तव्याः कथमिव सायकाः शरीरे।
यत्प्राप्तौ मम परिरम्भणाभिलाषादुन्मीलत्पुलककदम्बमर्धैमास्ते।[17]

**प्रकृति प्रेम**

प्रकृति प्रेम चराचर के साथ महानुभावों का प्रेम दिखाना भवभूति के लिए अभीष्ट है। पंचवटी का नाम सुनते ही आत्रोयी को सर्वप्रथम सीता के वृक्षों के साथ बन्धुत्व का स्मरण हो आता है– सएष ते वल्लभशाखिवर्गः।[18]

राम ने सीता के विषय में कहा है– प्रियारामाहि सर्वथा वैदेह्यासीत्। सीता ने भी राम से कहा था–

त्वया सह निवत्स्यामि वनेषु मधुगन्धिषु।[19]

राम के प्रेम ने प्रकृति को सजीवता प्रदान कर रखी है। वे प×चवटी प्रदेश की इस सजीवता का उपाख्यान करते हैं–

तदत्रौव सा पचवटी यत्रा चिरनिवासेन विविधविश्रम्भातिसाक्षिणः प्रदेशाः प्रियायाः प्रियसखी च वासन्ति नाम वन देवता।

राम के साथ पंचवटी का यही सजीवता भाव आगे भी रहता है। तभी तो राम ने कहा है–

हन्त! परिहरन्तमपि मामितः पचवटी स्नेहोबलादाकर्षति।

पंचवटी की सम्भावना करना राम अपना कर्तव्य समझते हैं उसी प्रकार जैसे अगस्त्यादिशियों का।

यत्रा द्रुमा अपि मृगा अपिबन्ध्वो मे
यानि प्रियासहचरश्चिरमध्यवात्सम्।
एतानि तानि बहुनिर्झरकन्दराणि
गोदावरी परिसरस्य गिरेस्तटानि।।[20]

प्रकृति के उपर्युक्त सजीवता का विशदीकरण करके भवभूति ने प्रकृति से अपने नाटक के लिए पात्रा ढूँढ़ लिये हैं। वे हैं नदियाँ–तमसा,मुरला, गोदावरी, गर्धी तथा सरयू एवं इनके साथ पृथ्वी भी।

सीता का पशुओं और पक्षियों के साथ प्रेम भी उदात्त है। उन्होने हाथी के बच्चे को पाल रखा था। उसे पल्लवी पल्लवाग्र खिलाती थीं। एक पालित मोर को वे नचाया करती थीं। प्रकृति के बीच सीता के प्रेम ने सौहार्द का साम्राज्य बना रखा था। हाथी का बच्चा उनका पुत्राक था। भवभूति के अनुसार प्रकृति ने राम और सीता के लिए एक कुटुम्ब बना रखा था। यथा–

येनोद्गच्छद्विसकिसलयस्निग्धदन्ताघ्कुरेण।
व्याकृष्टस्ते सुतनु! लवलीपल्लवः कर्णमूलात्।।
सो{यं पुत्रास्तव मदमुचां वारणानां विजेता।
यत्कल्याणं वयसि तरफणे भाजनं तस्य जातः।।[21]

प्रकृति का प्रेम–व्यापार उसके मानवीकरण के लिए अभिव्यक्त है। हस्ती–दम्पति में कान्तानुवृत्ति चातुर्य का परिलक्षण इसी मानवीकरण के उद्देश्य का साध्क है। राम ने वत्स हस्तियुवक के लिए कहा है–

लीलोत्खातमृणालकाण्डकवलच्छेदेषु सम्पादिताः।
पुष्यत्पुष्करवासितस्य पयसो गण्डूषसंक्रान्तयः।।
सेकः शीकरिणा करेण विहितः कामं विरामे पुन
र्य त्स्नेहादनरालनालनलिनीपत्राातपत्रां ध्तम् ।।[22]

वह ;हस्तियुवकद्ध एक नागरिक के सामन ही प्रियानुवर्तन में निष्णात था। हाथी के समान ही मयूर भी वध्सखः था। राम ने उसके विषय में कहा है–

सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि।[23]

राम और सीता के प्रकृति–प्रेम ने पशु–पक्षियों से जो मैत्रीभाव स्नेह–सम्बन्ध के द्वारा स्थापित किया था, उसका प्रत्यक्ष और कार्य के माध्यम से परिचय द्रष्टव्य है–

ददतु तरवः पुष्पैरर्घ्य पफलैश्च मधुश्च्युतः,स्पफुटितकमलामोदप्रायाः प्रवान्तु वनानिलाः।
कलमविरलं रज्यत्कण्ठाः क्वणन्तु शकुन्तयः,पुनरिदमयं देवो रामः स्वयं वनमागतः।।[24]

अपिच–करकमलवितीर्णैरम्बुनीबारशष्पैस्तरफशकुनिकु रर्धान्मैथिली यानपुष्यत्।।
भवति मम विकारस्तेषु दृष्टेषु को{पिद्रव इव हृदयस्य प्रस्तरोद् भेदयोग्यः।।[25]

मिथिलेश नन्दिनी ;सीता ने जिन वृक्षों, पक्षियों तथा हरिणों को कमलरूपी हाथों से दिये जल, नीवार तथा कोमल तृणों से पाला पोसा, उनके देखे जाने पर पाषाण को भी विदारण में समर्थ हृदयकी आर्द्रता जैसा मेरा कोई ;अनिर्वचनीयद्ध विकार चित्तका अन्यथाभावी उत्पन्न हो रहा है।

सीता द्वारा पोषित तरफ इत्यादिको देखकर राम के हृदय में एक अनिर्वचनीय प्रेम का उदय होता है, जो उनके हृदय को द्रवीभूत कर देता है, वह प्रेम मानों हृदय के द्रव के रूप में उनके सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो गया है। राम का वह प्रेम पाषाण को भी विदारण करने में समर्थ है। सीता द्वारा पोषित प्रकृति के प्रति भी राम का जब इतना अध्कि प्रेम है तो भला सीता अथवा अन्यप्राणियों के प्रति कितना अध्कि प्रेम होगा। इस प्रेम की गहराई को शब्दों में नहीं बाँध जा सकता है, अतः अनिर्वचनीय है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भवभूति ने अपने रूपकों में जिन प्रेम–स्वरूप का विवेचन किया है वह अति विशाल है, मानव जीवन के सभी क्षेत्राों में व्याप्त है, तथा हर आदर्श प्रेम का स्वरूप स्थापित करता है। आवश्यकता है हमें उसके मर्म को समझना तथा अपने आचरण में ढ़ालकर जीने की। इस प्रेम स्वरूप के आधर पर आध्यात्मिक जीवन में भी मानव तरक्की कर सकता है तथा व्यवहारिक जीवन में भी सपफल हो सकता है। प्रेम के विषय में जो भ्रांतियां समाज में पफैले होते हैं उसके समाधन में भी भवभूति के प्रेम विवेचन से सहायता मिल सकती है। प्रेम को जब हम वासना से जोड़कर देखते हैं तब उसका स्वरूप बहुत संकुचित हो जाता है तथा हम दिग्भ्रमित हो जाते हैं। हमें प्रेम के सच्चे स्वरूप का ज्ञान तथा अनुभव साहित्य से पढ़कर तथा व्यवहार से जानने का प्रयास करना चाहिए। उसके लिए भवभूति के रूपक आदर्श माने जा सकते हैं।

**सन्दर्भ सूची**

1. उ.रा.च.–6 / 12
2. उ.रा.च. –2 / पृ. 150
3. उ.रा.च.–4.2
4. उत्तररामचरित–1.36
5. मालतीमाध्व– 6 / 18
6. वही 6 / 19
7. उ.रा.च. 1 / 39
8. उ.रा.च. –2 / 19
9. उ.रा.च.–3 / 33
10. उ.रा.च.–6 / 32
11. उ.रा.च.–2 / 1
12. उ.रा.च.–3 / 26
13. उ.रा.च.–3 / 31
14. उ.रा.च.–3 / 31
15. मालती माध्व 9 / 32
16. उ.रा.च–5 / 18
17. उ.रा.च.–3 / 11
18. उ.रा.च.–2.6
19. उ.रा.च. –2.18
20. उ.रा.च.–3 / 8
21. उ.रा.च.–3 / 15
22. उ.रा.च.3 / 16
23. उ.रा.च.3 / 19
24. तदेव 3 / 24
25. तदेव 5 / 17